स्वतंत्रता का मतलब है हर लड़की और लड़के को शिक्षा का अधिकार मिलना। - मलाला यूसुफजई

संपादकीय

आओ सोचे 'आजादी'

आज हिन्दुस्तान अपनी आजादी की 77वीं वर्षगांठ मनाने जा रहा है। कहते हैं, हर भद्र इंसान को अपने जन्मदिन की खुशी मनाते हुए अपनी पिछली जिंदगी पर भरपूर नजर जरूर डालनी चाहिए। गुजरे वर्षों में हमने क्या खोया और क्या पाया? क्या भूलें कीं और उनके सुधार का जरिया क्या है? इस 15 अगस्त आप इस सिलसिले में एक हिन्दुस्तानी के नाते क्या सोचेंगे? इस पर सोचे। इससे पहले गर्व करने योग्य मुद्दों की चर्चा। अपने चारों ओर नजर दौड़ाइए। ऐसा लगेगा, जैसे आग लगी हुई है। बांग्लादेश इस सिलसिले की ताजातरीन कड़ी है। वहां खूंरेजी का डरावना सिलसिला जारी है। बेकाबू हिंसा में अब तक 450 से अधिक लोग मारे जा चुके हैं। वहां हालात इतने बेकाबू हुए कि प्रधानमंत्री शेख हसीना वाजेद को एक बार फिर जलावतनी पर मजबूर होना पड़ा। अब संगीनों के साये में जन्मी अंतरिम सरकार हालात पर काबू पाने की कोशिश में है। आज जो लोग शेख हसीना को तानाशाह और बददिमाग करार दे रहे हैं, वे कभी उनके लिए पलक-पांवडे. बिछाए बैठे थे। ऐसे लोग भूल जाते हैं कि 1971 में आजाद होने के चार साल के भीतर राष्ट्रपिता कहे जाने वाले शेख मुजीबुर्रहमान की उनके आवास में हत्या कर दी गई थी। शेख हसीना उस रात देश से बाहर न होतीं, तो वह भी मारी जातीं। बाद में भले ही वहां कोई पदेन राष्ट्राध्यक्ष नहीं मारा गया, पर दुर्भाग्यजनक हालात में कई बार तख्तापलट अवश्य हुआ। खुद शेख हसीना 2008 के जानलेवा प्रदर्शनों के बाद सत्ता में लौटी थीं। बांग्लादेश अपने पितृदेश पाकिस्तान जितना बदनसीब भले न हो, पर आदि देश भारत की तरह खुशनसीब भी नहीं है। बांग्लादेश में 2009 से अगले पंद्रह वर्ष अब निखालिस शेख हसीना वाजेद के थे। उन्होंने अर्थव्यवस्था को अवश्य धार दी, लेकिन इस बार वह जम्हूरियत की नकाब में तानाशाह थीं। यह नकाब वक्त के साथ उतरती गई और पिछली जून के चुनाव वह सिर्फ दमन के जरिये जीती थीं। इन चुनावों की जमकर जगहंसाई हुई थी। भला विपक्ष को जंजीरों में बांधकर कराए गए चुनाव को कैसे निष्पक्ष कहा जा सकता है? भावुक बंगालियों को उनसे यह उम्मीद न थी। वे सड़कों पर उतर आए और हसीना को दर-बदर होने पर मजबूर कर दिया। अब अराजकतावादियों की बन आई है। जिस प्रकार सुप्रीम कोर्ट को घेरकर प्रधान न्यायाधीश ओबैदुल हसन को इस्तीफे के लिए बाध्य किया गया, वह भयावह है। बांग्लादेश पाकिस्तान की कोख से जन्मा था। पाकिस्तान खुद चिर अस्थिरता का शिकार है। वहां सेना और कट्टरपंथियों की जुगलबंदी कहर ढा रही है। इस संबंध में काफी कुछ कहा-लिखा जा चुका है, इसलिए अगले पड़ोसी नेपाल की ओर बढ़ते हैं। तथाकथित क्रांति के बाद वहां वर्ष 2008 में राजशाही की जगह लोकशाही ने जरूर ले ली, पर सरकारों में स्थायित्व का चलन यहां भी नहीं देखने को मिलता। पिछले ही महीने वहां पुष्प कमल दाहाल 'प्रचंड' को हटाकर केपी शर्मा 'ओली' पुनः प्रधानमंत्री बन बैठे हैं। कभी राजशाही से हुई जंग में ये दोनों कॉमरेड जंग की जुगलबंदी किया करते थे। बगल के म्यांमार में जुंटा (फौज) की हुकूमत है और श्रीलंका भी कुछ माह पूर्व बांग्लादेश जैसे हालात से गुजरा है। रह बचा मालदीव, तो वहां राष्ट्रपति मुइज्जू चुने तो विधिवत गए हैं, पर लोकतांत्रिक मूल्यों में उनका भरोसा नहीं। ऐसा होता, तो वह अपने ही दो मंत्रियों को 'काला जादू' के आरोप में जेल न भेज देते। तय है, दक्षिण एशिया में अकेला भारत लोकतंत्र का स्थायी लाइट हाउस साबित हुआ है। हम लड़खड़ाते हैं, फिर भी बढ़ते रहते हैं। ऐसा नहीं है कि हमारे यहां अस्थिरता के दौर नहीं आए। गुजरे साढे सात स्वतंत्र दशकों में से लगभग 30 साल गठबंधन सरकारें रहीं। इनमें से चरण सिंह, वीपी सिंह, चंद्रशेखर, इंदर कुमार गुजराल और एचडी देवेगौड़ा की सरकारें लंबी न थीं, पर आयाराम-गयाराम के इस दौर में भी भारतीय अपने विश्वास से नहीं डिगे। यह सुकून की बात है। क्या इतना काफी है? यकीनन नहीं। हम सभी जानते हैं, भारत पाकिस्तान, बांग्लादेश या श्रीलंका जैसा नहीं है। हमारी विशालता, बहुलता और सहअस्तित्व की शानदार परंपरा हमें भटकने से रोकती है। कुछ लोग कहते हैं कि पाकिस्तान हमारा सहोदर है, वह बेपटरी हुआ, तो हम क्यों नहीं हो सकते? वे भूल जाते हैं कि साल 1947 की 15 अगस्त को हम अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त हुए थे, हजारों साल पुरानी हिन्दुस्तानियत से नहीं। पाकिस्तान में धर्म की आड़ में जो नई रहगुजर गढ़ने की कोशिश हुई, वह आत्मघाती साबित हुई। बांग्लादेश की भी यही दिक्कत है। वह बहुसंख्यकवाद और अपनी सेक्युलर परंपरा के बीच झूल रहा है। शांति के सतत संवाहक बौद्धों ने भी जब म्यांमार या श्रीलंका में बांग्लादेश जैसे प्रयोग करने की कोशिश की, तो वे औंधे मुंह जा गिरे। भूलें नहीं, धर्म संस्कृति का हिस्सा होता है। संस्कृति धर्म का नहीं। दोनों एक-दूसरे को सतत समृद्ध करते चलते हैं। उन्हें एक-दूसरे पर लादने की कोशिश हर बार आत्मघाती साबित हुई है। भारतीय उप-महाद्वीप के लिए कठमुल्लापन जहर है। 15 अगस्त हर वर्ष हमें इसका स्मरण कराता है। एक और बात। हमें आशंकाओं के सौदागरों से भी सचेष्ट रहना होगा। तमाम स्वनामधन्य बोधिसत्वों को लगता था कि भारत लोकतंत्र के लिए नहीं बना। हम असफल हो जाएंगे। गुजरे 77 साल उनकी भविष्यवाणी को भोथरा साबित करने वाले साबित हुए हैं। हम आगे भी उन्हें ऐसे ही निराश करते रहेंगे।

15 अगस्त विशेषः इतिहास के संघर्षों से निकलकर मिली हिंदुस्तान को आजादी

हम हर साल 15 अगस्त को बड़े हर्षोल्लास के साथ स्वतंत्रता दिवस मनाते हैं। इसी दिन की पहली बेला पर 1947 में पंडित जवाहरलाल नेहरू ने पहले प्रधानमंत्री के तौर पर पहली बार राष्ट्रीय ध्वज के तौर पर तिरंगे को फहराने के साथ ही ऐतिहासिक भाषण ''ट्रीस्ट विद डेस्टिनी'' या भाग्य के साथ साक्षात्कार दिया था। लेकिन क्या सचमुच उस दिन हमारा देश पूरी तरह आजाद हुआ था? दरअसल, सच्चाई यह है कि उस दिन भारत और पाकिस्तान को दो उपनिवेशों का दर्जा मिला था जिनकी सरकारें स्वदेशियों की थीं मगर सार्वभौम सत्ता फिर भी ब्रिटिश सम्राट के पास थी। उस स्वायत्तशसी भारत को सम्प्रभुता सम्पन्न लोकतांत्रिक गणराज्य बनने के लिये 26 जनवरी 1950 तक और पाकिस्तान को 1956 तक इंतजार करना पड़ा। यही नहीं उस दिन के बाद भी भारत की सेकड़ों रियासतें राजशाही के बंधनों में जकड़ी हुयी थीं।

शासन प्रमुख राष्ट्रपति न हो कर गवर्नर जनरल थे

15 अगस्त 1947 के बाद भारत के संवैधानिक मुखिया ब्रिटिश साम्राज्य के प्रतिनिधि गवर्नर जनरल लॉर्ड माउंटबेटन और फिर चक्रवर्ती राजगोपालाचारी थे। माउंटबेटन के बाद जब एक भारतीय, राजगोपालाचारी ने गवर्नर जनरल के पद की शपथ ली थी तो वह शपथ भी ब्रिटिश सम्राट (हिज मजेस्टी) के प्रति बफादारी की थी न कि भारत की नयी व्यवस्था के प्रति। सम्प्रभुता सम्पन्न एक गणराज्य के संविधान के लागू होने तक भारत पर 1935 का ही भारत सरकार अधिनियम लागू था जिसे ब्रिटिश पार्लियामेंट ने पारित किया था। यही नहीं भारत स्वतंत्रता अधिनियम, जिसके तहत भारत और पाकिस्तान दो उपनिवेशों के अस्तित्व में लाने के प्रावधान किये गये थे, वह भी ब्रिटिश संसद द्वारा पारित था। उस समय भारत की स्थिति भी ब्रिटेन द्वारा नियंत्रित अन्य उपनिवेशों की जैसी ही थी।

पहले मंत्रिमण्डल की शपथ क्राउन की वफादारी की

सरल शब्दों में कहें तो डोमिनियन या उपनिवेश ब्रिटिश साम्राज्य के भीतर स्वायत्त शासन की इकाइयां थीं जो स्वायत्त अवश्य थे लेकिन ''क्राउन'' या सम्राट के प्रति निष्ठा रखते थे। इसका मतलब यह था कि किंग जॉर्ज षष्टम भारत के सम्राट के रूप में शासन करते रहे और लॉर्ड माउंटबेटन के बाद जब चक्रवर्ती राजगोपालाचारी देश के पहले भारतीय गवर्नर जनरल बने तो उन्होंने भी ब्रिटिश ताज के प्रति बफादारी की शपथ ली। जवाहरलाल नेहरू ने प्रधानमंत्री के रूप में शपथ तो ली लेकिन उन्हें राष्ट्र के मुखिया के तौर पर ब्रिटिश गवर्नर-जनरल के आदेश पर काम करना पड़ा और उनकी बैबिनेट के अनिर्वाचित भारतीय राष्ट्रवादी नेताओं को ब्रिटिश राजा या सम्राट के नाम पर

शपथ दिलाई गई। इसका यह भी मतलब था कि एक ब्रिटिश फील्ड मार्शल भारतीय सेना का नेतृत्व करता था और ब्रिटिश द्वारा नियुक्त न्यायाधीश उच्च न्यायालयों और संघीय न्यायालय का हिस्सा बने रहते थे।

आखिर क्यों स्वीकारा भारतीय नेताओं ने डोमिनियन स्टेटस?

अब सवाल उठता है कि आखिर भारतीय नेताओं और खास कर कांग्रेस ने 15 अगस्त 1947 को एक स्वतंत्र संप्रभु राष्ट्र के बजाय एक डोमिनियन राज्य को क्यों स्वीकार किया? देखा जाय तो उस समय की परिस्थितियों के अनुसार यह एक व्यावहारिक निर्णय था जिसका उद्देश्य महत्वपूर्ण आंतरिक और बाहरी चुनौतियों की पृष्ठभूमि के बीच औपनिवेशिक शासन से पूर्ण स्वतंत्रता तक एक स्थिर और प्रबंधनीय सत्ता संक्रमण सुनिश्चित करना था। कोई भी राष्ट्र अपने संविधान से चलता है और उस समय नये भारत का अपना कोई संविधान नहीं था। उस समय संविधानसभा देश के लिये अपना संविधान बनाने की प्रकृया में थी। वैसे भी संविधान तैयार करने में 2 साल 11 महीने और 18 दिन लग गये थे। जिसे संविधानसभा ने 26 नवम्ब 1949 को अंगीकृत किया गया। इसलिये इतने दिनों तक अपने लोगों द्वारा गठित सरकार को 1935 के विधान से ही काम चलाना पड़ा।

भयंकर दंगे और अस्थिरता भी डोमिनियन की मजबूरी

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलनका एकमात्र लक्ष्य आंशिक स्वतंत्रता न हो कर जोर पूर्ण स्वतंत्रता के लिए था। अगस्त सन् 1947 तक भारत भारी राजनीतिक और सामाजिक उथल-पुथल का सामना कर रहा था। भारत और पाकिस्तान में भारत के विभाजन के कारण भयंकर हिंसा, सामूहिक पलायन और सांप्रदायिक दंगे हुए थे। अराजक स्थिति को देखते हुए नेताओं को लगा कि डोमिनियन स्थिति को स्वीकार करने से कुछ स्थिरता बनाए रखते हुए औपनिवेशिक शासन से पूर्ण संप्रभुता में संक्रमण को अधिक प्रबंधनीय बनाया जा सकेगा। 1940 के दशक के अंत में ब्रिटिश सरकार के साथ बातचीत जटिल थी। अंग्रेज जल्दी से जल्दी भारत से चले जाना चाहते थे और डोमिनियन स्टेटस एक समझौता था जिसने उन्हें भारत को एक सीमा तक स्वायत्तता प्रदान करते हुए अपने प्रस्थान को सहज और सरल बनाने में मदद मिली।

भावी स्थिर ढांचे के लिये जरूरी समझा गया डोमिनियन

जवाहरलाल नेहरू और सरदार पटेल जैसे नेताओं ने एक स्थिर प्रशासनिक ढांचे की आवश्यकता अनुभव की जिसके लिये डोमिनियन स्टेटस सरल और सहज समझा गया। इस दर्जे से भारत को धीरे-धीरे अपनी सरकार और संस्थाएँ स्थापित करने में आसानी हुयी और यह सुनिश्चित हुआ कि एक पूर्ण संप्रभु राज्य में संक्रमण सुचारू और सुनियोजित होगा। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद का अंतर्राष्ट्रीय वातावरण भी उपनिवेश के दर्जे का एक कारक था। नवगठित संयुक्त राष्ट्र और उसके उपनिवेशवाद विरोध के सिद्धांत वैश्विक राजनीति को प्रभावित कर रहे थे। डोमिनियन स्टेटस को स्वीकार करके भारतीय नेता अंततः पूर्ण संप्रभुता की तैयारी करते हुए अंतर्राष्ट्रीय मानदंडों के साथ जुड़ रहे थे। उस समय कांग्रेस द्वारा डोमिनियन स्टेटस को पूर्ण स्वतंत्रता की ओर एक कदम के रूप में देखा गया। इसके नेताओं का मानना था कि यह चरणबद्ध दृष्टिकोण उन्हें देश की राजनीतिक और आर्थिक संरचनाओं को प्रभावी ढंग से बनाने की अनुमति देगा। इस संक्रमण काल का उद्देश्य पूर्ण और स्थिर संप्रभुता का मार्ग प्रशस्त करना था। 15 अगस्त 1947 के दिन भारतीय उपमहाद्वीप में 565 रियासतों को आधिकारिक तौर पर मान्यता दी गई थी। इसके अलावा हजारों जमींदारी एस्टेट और जागीरें भी थीं। 1947 में भारत के कुल भूभाग में से 40 प्रतिशत पर देसी रियासतें थीं जिसमें 23 जनसंख्या थी जोकि सामंती शासन के अधीन थी। सबसे महत्वपूर्ण राज्यों के पास अपने स्वयं के ब्रिटिश राजनीतिक एजेंट थे। इसलिये भी नहीं कहा जा सकता कि भारत 15 अगस्त 1947 को पूरी तरह से स्वतंत्र हो गया था। दरअसल भारत को सम्पूर्ण आजादी के साथ सम्प्रभुता सम्पन्न लोकतांत्रिक गणराज्य का दर्जा देने देने वाला कोई और नहीं बल्कि देश की संविधान सभा थी जिसने अनुच्छेद 395 के क्रांतिकारी प्रावधान ने ब्रिटिश संसद द्वारा पारित और महारानी द्वारा आदेशित भारत सरकार अधिनियम 1935 तथा भारत स्वतंत्रता अधिनियम 1947 को सीधे-सीधे रद्द या रिपील कर दिया था। संविधान के इस अनुच्छेद ने गुलामी की इन निशानियों को एक झटके में इतिहास के कूड़ेदान में डाल दिया था।

सहज योग

परमतत्व पाना आसान नहीं

सच्चे लोग हैं, कहते हैं हम लोग झूठे नहीं, इसको भगवान का नाम नहीं देते हैं। उन लोगों का ऐसा है कि उनको आप चिट्ठी लिख दीजिए तो वो आपको लिखकर भेजते हैं कि दस बजे उतने समय पर कोई आदमी आपके पास आकर कुछ कर जाएगा, आप आराम से देखते रहना।

आपने सुना होगा डॉक्टर लैंग एक आदमी था, लंदन में बहुत बड़ा डॉक्टर वो मर गया, अकस्मात वो मर गया। उसकी इच्छाएं अतृप्त थी। एक सैनिक था वियतनाम में उसके सुपर इगो में वो घुस गया। उसको कहने लगे तुम लंदन चलो, मेरी लड़की के घर वहां पहुंचे, तो उन्होंने उनसे कहा उनको कहो कि मैं आया हूं तुम्हारे अंदर, तो लड़के ने कहा इसका क्या विश्वास? तो उन्होंने उसको सब बताया, जो कुछ भी उनके बीच में गुप्तवार्ता हुए थे, वो सब बताए। उसको विश्वास हो गया। उसने कहा तुम फिर से मेरा संगठन शुरु करो, मैं तुम्हारी मदद करूंगा क्योंकि यहां परलोक में बहुत से डॉक्टर हैं, जो Menifest करना चाहते हैं, जो अवतरित होना चाहते हैं। उनका बड़ा भारी अंतरराष्ट्रीय संगठन है। सच्चे लोग हैं, कहते हैं हम लोग झूठे नहीं, इसको भगवान का नाम नहीं देते हैं। उन लोगों का ऐसा है कि उनको आप चिट्ठी लिख दीजिए तो वो आपको लिखकर भेजते हैं कि दस बजे उतने समय पर कोई आदमी आपके पास आकर कुछ कर जाएगा, आप आराम से देखते रहना। और बराबर उसी वक्त आपको कुछ लगता है कि कुछ हुआ अपने अंदर में और आप ठीक भी हो गए। बहुत से लोग ठीक भी हुए है लेकिन तो भी ठीक करने से केवल शरीर ही तो ठीक किया है, उससे परम तत्व तो किसी ने नहीं पाया। परम तो मिला नहीं, ये शरीर तो यही छूट जाएगा और फिर वहां जाकर फिर यहीं आना है और जिन पर वो ऐसे प्रयोग कर रहे हैं वो ये भी नहीं जानते, वो भी अबोध है, वो भी उनका बचकानापन है। वो जानते नहीं है कि जिस Spirit को वो आज इस्तेमाल कर रहे हैं वही कल उलट कर हमारे ऊपर आएंगे। मैं सोचती हूं Dr. Lang थोड़ा सा जानते थे, नहीं तो अपनी लड़की के अंदर क्यों नहीं घुसे? वो एक Soldier के अन्दर जाकर क्यों घुसे? और Spirit का देह जो होता है उस पर ये जड़ नहीं होता, इसलिए बहुत कुछ देख सकता है बनिस्बत हमारे। जिसको कि आप Para Psychology कहते हैं, जिसे कि आप आत्मा का आशीर्वाद कहते हैं, जो कूदना होता है, जो चीखना होता है, चिल्लाना होता है और सम्मोहन करना होता है सारा Spirit का काम है। उसमें कुछ अच्छे Spirit भी होते हैं। कुछ Spirit बहुत ही.. जैसे हम हैं वैसे Spirit भी हैं। इसमें राक्षस भी होते हैं, महादुष्ट भी है। आप उन्हें आज देख नहीं रहे, हो सका तो बाद में आपको मैं दिखा भी दूंगी, जैसे आज में आपको कुण्डलिनी दिखा रही हूं। ऐसा समय आ जाए तो मैं आपको ये भी दिखा दूंगी। लेकिन है। उनका वास्तव्य आप देख सकते हैं, उनका असर आप देख सकते हैं, उनका असर आप देख सकते हैं और हर एक धर्म में उनके बारे में लिखा है।

प्रस्तुति: धीरज सिंह

जीवन ऊर्जा

अरबिंदो घोष : जन्म- 15 अगस्त, 1872

जन्म

वैराग्य ही प्रभुत्व की शुरुआत है

अरबिंदो घोष का जन्म 15 अगस्त, 1872 को कलकत्ता में हुआ था। वह एक योगी, द्रष्टा, दार्शनिक, कवि और भारतीय राष्ट्रवादी थे। 5 दिसम्बर 1950 को अरबिंदो घोष जी ने अपना शरीर त्याग दिया।

यदि कोई धर्म सार्वभौमिक नहीं है, तो वह शाश्वत नहीं हो सकता है। एक संकीर्ण धर्म, एक सांप्रदायिक धर्म, एक विशेष धर्म केवल सीमित समय और सीमित उद्देश्य के लिए रह सकता है। यदि तुम किसी का चरित्र जानना चाहते हो तो उसके महान कार्य न देखो, उसके जीवन के साधारण कार्यों का सूक्ष्म निरीक्षण करो। जो ईश्वर से प्रेम करता है उसे अपने प्रेम की वस्तु हर जगह दिखाई देती हैं। पढो, लिखो, कर्म करो, आगे बढ़ो, कष्ट सहन करो, एकमात्र मातृभूमि के लिए, मां की सेवा के लिए। योग का अभ्यास हमें अपने स्वयं की असाधारण जटिलता के साथ सामना कराता है। आध्यात्मिकता वास्तव में भारतीय मन की प्रमुख कुंजी है, अनंत की भावना यहां जन्मजात है,

जिसमें त्याग की मात्रा, जितने अंश में हो, वह व्यक्ति उतने ही अंश में हो, वह व्यक्ति उतने ही अंश में पशुत्व से ऊपर है। मानव प्रेम की सर्वोच्च स्थिति है, दो शरीरों में एक आत्मा। गुण कोई किसी को नहीं सिखा सकता। दूसरे के गुण लेने या सीखने की जब भूख मन में जागती है, तो गुण अपने आप सीख लिए जाते हैं। मेरा ईश्वर प्रेम है और यह मधुरता से सबको प्रभावित करता हैं।

हमारा वास्तविक शत्रु कोई बाहरी ताकत नहीं है, बल्कि हमारी खुद की कमजोरियों का रोना, हमारी कायरता, हमारा स्वार्थ, हमारा पाखंड, हमारा पूर्वाग्रह है। अपना अंदरूनी जीवन जियो, यह बाहरी घटनाओं से डगमगाना नहीं चाहिए। वैराग्य ही प्रभुत्व की शुरुआत है, जिसे हम हिंदू धर्म कहते हैं, वह वास्तव में सनातन धर्म है, क्योंकि यह अन्य सभी को गले लगाता है। सच्चा ज्ञान सोचने से नहीं मिलता है। यह वही है जो तुम हो, यह वही है जो आप बन जाते हैं।

शखिसयत | महर्षि अरबिंदो घोष

कवि, योगी और स्वतंत्रता सेनानी

महर्षि अरबिंदो घोष इंग्लैंड में शिक्षित पहले भारतीयों में से एक थे। वह एक कवि, विचारक, स्वतंत्रता सेनानी, योगी और आध्यात्मिक नेता थे। वह हमारे देश के स्वतंत्रता संग्राम में अपने अविश्वसनीय योगदान के लिए जाने जाते हैं। वह आध्यात्मिकता की एक बिल्कुल नई प्रणाली लेकर आए। उन्होंने आध्यात्मिकता के अपने मार्ग को 'अभिन्न योग' कहा। उन्होंने भारतीय संस्कृति, देश के सामाजिक-राजनीतिक विकास, आध्यात्मिकता आदि पर केंद्रित कई किताबें लिखी थीं।

अरबिंदो घोष का जन्म 15 अगस्त, 1872 को कलकत्ता में हुआ था। 1879 में सात साल की उम्र में, उन्हें अपने दो बड़े भाइयों के साथ शिक्षा के लिए इंग्लैंड ले जाया गया और चौदह साल तक वहां रहे। सबसे पहले मैनचेस्टर में एक अंग्रेजी परिवार में पले-बढ़े, उन्होंने 1884 में लंदन के सेंट पॉल स्कूल में प्रवेश लिया और 1890 में वहां से वरिष्ठ शास्त्रीय छात्रवृत्ति के साथ किंग्स कॉलेज, कैम्ब्रिज चले गए, जहां उन्होंने दो साल तक अध्ययन किया। 1893 में भारत लौटकर उन्होंने अगले तेरह वर्षों तक बड़ौदा रियासत में महाराजा की सेवा में और बड़ौदा कॉलेज में प्रोफेसर के रूप में काम किया। इस अवधि के दौरान वह एक क्रांतिकारी समाज में भी शामिल हो गए और भारत में ब्रिटिश सरकार के खिलाफ विद्रोह की गुप्त तैयारियों में अग्रणी भूमिका निभाई। 1906 में बंगाल के विभाजन के तुरंत बाद अरबिंदो ने बड़ौदा में अपना पद छोड़ दिया और कलकत्ता चले गए, जहां वे जल्द ही राष्ट्रवादी आंदोलन के नेताओं में से एक बन गए। वह भारत के पहले राजनीतिक नेता थे, जिन्होंने अपने समाचार पत्र बंदे मातरम में देश की पूर्ण स्वतंत्रता के विचार को खुले तौर पर सामने रखा। दो बार राजद्रोह के लिए और एक बार साजिश के लिए मुकदमा चलाया गया। हर बार सबूतों के अभाव में उन्हें रिहा कर दिया गया। अरबिंदो घोष ने 1905 में बड़ौदा में योग का अभ्यास शुरू किया था। 1908 में उन्हें कई मौलिक आध्यात्मिक अनुभूतियों में से पहली अनुभूति हुई। 1910 में वह राजनीति से हट गए और खुद को पूरी तरह से अपने आंतरिक आध्यात्मिक जीवन और काम के लिए समर्पित करने के लिए पांडिचेरी चले गए। पांडिचेरी में अपने चालीस वर्षों के दौरान उन्होंने आध्यात्मिक अभ्यास की एक नई पद्धति विकसित की, जिसे उन्होंने इंटीग्रल योग कहा।

इसका उद्देश्य एक आध्यात्मिक अनुभूति है जो न केवल मनुष्य की चेतना को मुक्त करती है, बल्कि उसके स्वभाव को भी बदल देती है। 1926 में अपनी आध्यात्मिक सहयोगी, मां की मदद से उन्होंने अरबिंदो आश्रम की स्थापना की। उनके कई लेखों में द लाइफ डिवाइन, द सिंथेसिस ऑफ योगा और सावित्री शामिल हैं। 5 दिसंबर 1950 को अरबिंदो ने अपना शरीर त्याग दिया।

प्रेरक प्रसंग

गुलाम की सीख

दास प्रथा के दिनों में एक मालिक के पास अनेकों गुलाम हुआ करते थे। उन्हीं में से एक था लुक़मान। लुक़मान था तो सिर्फ एक गुलाम लेकिन वह बड़ा ही चतुर और बुद्धिमान था। उसकी ख्याति दूर दराज़ के इलाकों में फैलने लगी थी। एक दिन इस बात की खबर उसके मालिक को लगी, मालिक ने लुक़मान को बुलाया और कहा- सुनते हैं, कि तुम बहुत बुद्धिमान हो। मैं तुम्हारी बुद्धिमानी की परीक्षा लेना चाहता हूँ। अगर तुम इम्तिहान में पास हो गए तो तुम्हें गुलामी से छुट्टी दे दी जाएगी। अच्छा जाओ, एक मरे हुए बकरे को काटो और उसका जो हिस्सा बढ़िया हो, उसे ले आओ। लुक़मान ने आदेश का पालन किया और मरे हुए बकरे की जीभ लाकर मालिक के सामने रख दी। कारण पूछने पर कि जीभ ही क्यों लाया ! लुक़मान ने कहा- अगर शरीर में जीभ अच्छी हो तो सब कुछ अच्छा-ही-अच्छा होता है। मालिक ने आदेश देते हुए कहा- "अच्छा! इसे उठा ले जाओ और अब बकरे का जो हिस्सा बुरा हो उसे ले आओ।" लुक़मान बाहर गया, लेकिन थोड़ी ही देर में उसने उसी जीभ को लाकर मालिक के सामने फिर रख दिया। फिर से कारण पूछने पर लुक़मान ने कहा- "अगर शरीर में जीभ अच्छी नहीं तो सब बुरा-ही-बुरा है। " उसने आगे कहते हुए कहा- "मालिक! वाणी तो सभी के पास जन्मजात होती है, परन्तु बोलना किसी-किसी को ही आता हैक्या बोलें? कैसे शब्द बोलें, कब बोलें.. इस एक कला को बहुत ही कम लोग जानते हैं। एक बात से प्रेम झरता है और दूसरी बात से झगड़ा होता है। कड़वी बातों ने संसार में न जाने कितने झगड़े पैदा किये हैं। इस जीभ ने ही दुनिया में बड़े-बड़े कहर ढाये हैं।जीभ तीन इंच का वो हथियार है जिससे कोई छः फिट के आदमी को भी मार सकता है तो कोई मरते हुए इंसान में भी प्राण फूंक सकता है । संसार के सभी प्राणियों में वाणी का वरदान मात्र मानव को ही मिला है। उसके सदुपयोग से स्वर्ग पृथ्वी पर उतर सकता है और दुरूपयोग से स्वर्ग भी नरक में परिणत हो सकता है। भारत के विनाशकारी महाभारत का युद्ध वाणी के गलत प्रयोग का ही परिणाम था। " मालिक, लुक़मान की बुद्धिमानी और चतुराई भरी बातों को सुनकर बहुत खुश हुए ; आज उनके गुलाम ने उन्हें एक बहुत बड़ी सीख दी थी और उन्होंने उसे आजाद कर दिया। मित्रों, मधुर वाणी एक वरदान है जो हमें लोकप्रिय बनाती है वहीँ कर्कश या तीखी बोली हमें अपयश दिलाती है और हमारी प्रतिष्ठा को कम करती है। आपकी वाणी कैसी है ? यदि वो तीखी है या सामान्य भी है तो उसे मीठा बनाने का प्रयास करिये। आपकी वाणी आपके व्यक्तित्व का प्रतिबिम्ब है , उसे अच्छा होना ही चाहिए।

सर्वसिद्ध श्री बगलामुखी तारा महाशक्ति पीठ बिजाना शाजापुर मध्य प्रदेश

नामकरण क्यों और कैसे हो ?

नामकरण संस्कार में बच्चे को शहद चटाकर भगवान सूर्यनारायण के दर्शन कराये जाते हैं और शुभ संकल्प किया जाता है कि 'बालक सूर्य की प्रखरता, तेजस्विता धारण करें .' इसके साथ ही भूमि को नमन करके देव-संस्कृति के प्रति श्रद्धापूर्वक समर्पण किया जाता है । बच्चे का नाम रखकर सब लोग उसके चिरंजीवी, धर्मवान, स्वस्थ एवं लौकिक, आध्यात्मिक – सर्व प्रकार से उन्नतिशील होने, समृद्ध होने का सदभाव करते हैं । मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि जिस तरह के नाम से व्यक्ति को पुकारा जाता है, उसे उसी प्रकार के गुणों की अनुभूति होती है । अतः नाम की सार्थकता समझते हुए ऐसा नाम रखना चाहिए जिससे आगे चलकर बालक को लगे कि मुझे बड़े होकर मेरे नाम के गुणानुसार बनना है । हमारे लाडलों के नाम कैसेहोबालक का नाम ऐसा पवित्र रखो कि पवित्र भगवान का सुमिरन हो । आजकल लोग बच्चों के नाम गजब के रखते हैं । लडकियों के नाम रखते हैं लेष्मा, श्लेष्मा. अब श्लेष्मा

तो नाक से निकली हुई गंदगी को बोलते हैं । लडकों के नाम रखते हैं टिन्नू, मिन्नू, बंकी, विक्की, पुम्बू.ये कोई नाम हैं । अभिनेत्रियों के नाम लडकियों के रखेंगे, अभिनेताओं के नाम लडकों के रखेंगे यह तो बहुत हो गया । वे बेचारे अंदर से खुद ही अशांत हैं तो अपने बच्चों को उनके नाम से क्या शांति मिलेगी, क्या ज्ञान मिलेगा। अरे हरिदास रखो, गोविन्द, अम्बादास, हरिप्रसाद, शिवप्रसाद ... भगवान की स्मृति आये ऐसे नाम रखो । अभिनेता के नाम रखोगे तो लड़का अभिनेता जैसा होगा और भक्तों व भगवान के नाम रखोगे तो कुछ तो नाम का भी प्रभाव पड़ेगा उसके चित्त पर । 'रावण' नाम नहीं रखते, किसका नाम 'रावण' रखे तो कैसा मन हो जाय ? रावण, कुम्भकर्ण, हिटलर नाम नहीं रखते, अच्छे अच्छे नाम रखते हैं। सावित्री, गार्गी, अनसूया, मदालसा, अम्बा, अम्बिका नाम रख दें अपनी कन्या का. शबरी नाम रख दें तो भक्त शबरी की याद या जायेगी, भगवान श्रीरामजी की याद आ जायेगी । स्वयंप्रभा, सुलभा, ज्योति, सीता, पार्वती रख दें ..... ऐसे-ऐसे और भी कई पावन-पवित्र नाम हैं । चिंता न करें कि नाम कम पड जायेंगे । भारत के ऋषियों ने श्रीविष्णुसहस्रनाम, श्रीशिवसहस्रनाम, श्रीदुर्गासहस्रनाम आदि की रचना करके आपके लिए भगवन्नामों का भंडार खोल रखा है अपने सत्शास्त्रों में । तो ऐसे पवित्र-पावन नाम रखो ताकि भगवान की स्मृति आ जाय ।

(क्रमशः)

पंडित कैलाशचंद्र शर्मा
वैदिक सनातन संस्कृति के प्रचारक व सर्व सिद्ध श्री बगलामुखी तारा महाशक्ति पीठ के संस्थापक।
मो. नं. 9425980556

यह अखबार "माध्यम कार्पोरेट सर्विसेज लि. " के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक अरुणलाल द्वारा ग्राउंड फ्लोर, ऑफिस नं. 2, के. के. चैम्बर्स, पुरुषोत्तमदास ठाकरदास रोड, फोर्ट, मुंबई- 400001 से प्रकाशित एवं सोमानी प्रिंटिंग प्रेस, गाला नं. 4, एन.के.इंडस्ट्रियल इस्टेट, इनसाइड प्रवासी इंडिस्ट्रयल इस्टेट गेट नं. 2, गोरेगांव पू., मुंबई-63 से मुद्रित। फोन नं. 022-66555719 ईमेल : indiagroundreport@gmail.com कार्यकारी संपादक : राजा आदाटे (पी.आर.बी. अधिनियम के अंतर्गत खबरों के चयन के लिए जिम्मेदार)।